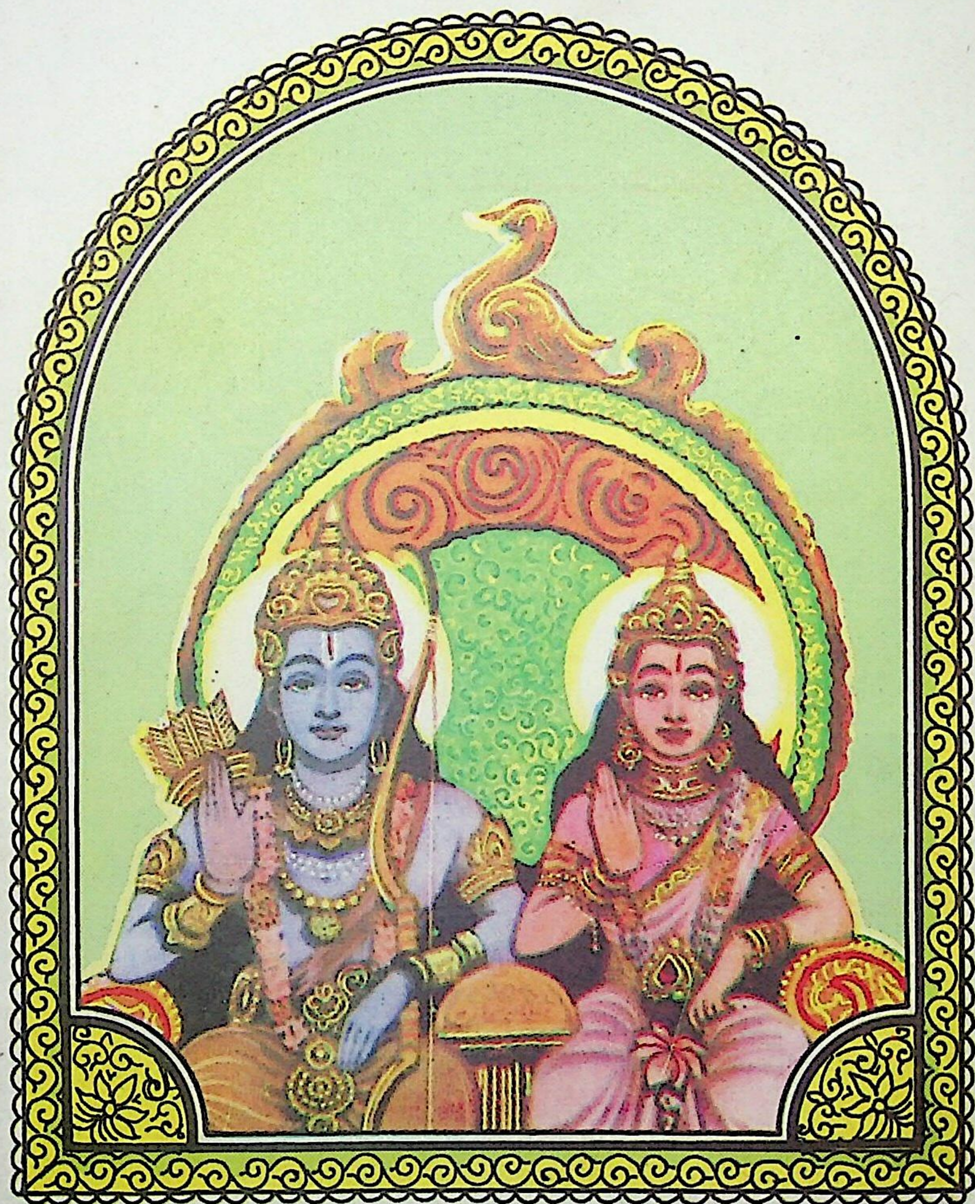
श्रीरामस्तवराज

हिन्दी टीका सहित



खेमराज श्रीकृष्णदास प्रकाशन, बम्बई

श्रीः

सनत्कुमारसंहितान्तर्गत सचित्र-

श्रीरामस्तवराज

(द्वादशमासकी पाठविधि और माहात्म्य से विभूषित.)

बाँसबरेलीनिवासी अनेक ग्रंथोंके टीकाकार व रचयिता सनातनधर्मके महोपदेशक
पण्डित-श्यामसुन्दरलाल त्रिपाठीकृत

हिन्दीटीकासहित

मुद्रक एवं प्रकाशकः

खेमराज श्रीकृष्णदास,

अध्यक्ष : श्रीवेंकटेश्वर प्रेस,

खेमराज श्रीकृष्णदास मार्ग, मुंबई - ४०० ००४.

संस्करण : जून २०१६, सवंत् २०७३

मूल्य : ३० रुपये मात्र ।

मुद्रक एवं प्रकाशक:
खेमराज श्रीकृष्णदास,™
अध्यक्ष : श्रीवेंकटेश्वर प्रेस,
खेमराज श्रीकृष्णदास मार्ग,
मुंबई - ४०० ००४.

Printers & Publishers :
Khemraj Shrikrishnadass Prop: Shri Venkateshwar Press, Khemraj Shrikrishnadass Marg, 7th Khetwadi, Mumbai - 400 004.

Web Site : http://www.Khe-shri.com
Email : khemraj@vsnl.com

Printed by Sanjay Bajaj For M/s.Khemraj Shrikrishnadass Proprietors Shri Venkateshwar Press, Mumbai-400 004, at their Shri Venkateshwar Press, 66 Hadapsar Industrial Estate, Pune 411 013

श्रीरामपञ्चायतन



श्रीरामस्तवराजके द्वादशमासके पाठकी विधि और माहात्म्य



दोहा–तीन पाठ आषाढमें, करे जो तीनों काल।
सर्व सिद्धि ताको मिलैं, मिटैं सकल भवजाल ॥१॥
श्रावण तीनों कालमें, पाठ एकादश बार।
करै तौ मनवाञ्छित मिलै, अचित चितावै सार ॥२॥
भाँदों तीनों कालमें, पाठ करै इकबार।
दर्शन पावै देवके, संशय मिटै अपार ॥३॥
आश्विन तीनों कालमें, पाठ करै नित सात।
आर्द्धोदयमें जानिये, इच्छाचारी पात ॥४॥
कार्त्तिक मास त्रिकालमें, इक्किस इक्किस बार।
करै पाठ जल सूर्यको, देय तो सिद्धि अपार ॥५॥
सूखा पीपर हो हरा, इसका यही प्रभाव।
सिद्धि होय सब भाँतिसों, हिय बाढै हरिभाव ॥६॥
अगहन तीनों कालमें, सात सात इक बार।
करै तो तीनों लोकमें, जय पावै सत्कार ॥७॥
पौषमास तिहुँ कालमें, करै पाठ नित पांच।
मनकी चिन्ता दूर हो, सुख पावै सब साँच ॥८॥
माघमास तिहुँ कालमें, पढिये बारह बार।
दर्शन हो रघुनाथका, सुख पावै संसार ॥९॥
फाल्गुन तीनों कालमें, बाइस बाइस बार।
पाठ करै तो शम्भुको, दर्शन हो निरधार ॥१०॥
चैत तीनहूं कालमें, चालिस चालिस बार।
पाठ करै तो ब्रह्मको, दर्शन हो सुखसार ॥११॥
तीस तीस वैसाखमें, तीनहुं काल जपाय।
तो फिर तीनहुं कालभी, इच्छा सिद्ध होजाय ॥१२॥
जेठ मास तिहुं कालमें, पाठ पचीस पचीस।
करै फिरै तिहुं लोकमें, गुण गावै जगदीश ॥१३॥

यश गावै शंकर द्रवै, पारवती हरषाय।
कीरति फैले विजय हो, सकल ठौर सुखदाय ।।१४।।

कवित्त–एक बार करै शुद्धभोजन एकान्त रहै।
पलंगपै न सोवे ब्रह्मचर्य्य सदा ठानिये।।
इंद्रियोंको जीत मित्र नीचसों ना भाषण करे।
पाठ करते में सदा उठनकी न आनिये।।
काम क्रोध आदि त्याग झूठको न बोल कभूं।
धूप दीप देके हरि पूजा मन मानिये।।
राखिये विश्वास तब पूरी सब आस होय।
ग्रन्थ फलीभूत होय विधि सांची जानिये ।।१।।

सूचना

प्रिय पाठकगण !

आज आपकी सेवामें सनत्कुमारसंहिताके अन्तर्गतवाले समस्त वेदोंके सारस्वरुप "श्रीरामस्तवराज" को हिन्दीटीकासे भूषित कर समर्पित करता हूं, इसका विधिपूर्वक पाठ करनेसे आपके सभी मनोरथ सिद्ध होंगे।

इस पुस्तकके मूल पाठको, साम्प्रदायिक प्राचीन लिखी पुस्तकोंके और सांप्रदायिक आचार्योंके बनाये भाष्योंके अनुसारही रखकर सरल हिन्दीटीका बनाई है। आधुनिक छपी और लिखी हुई पुस्तकोंके पाठभेद भी अनेक स्थानोंपर दिखाये हैं।

मनुष्यस्वभावसे यदि किसी स्थानपर त्रुटि रही हो तो महात्माजन मुझे सूचित करें वह अन्य आवृत्तिमें सुधार दी जायेगी।

आपका वही चिरपरिचित-
श्यामसुन्दरलाल त्रिपाठी
गलाबनगर-बाँसबरेली.

श्रीरामस्तवराजके पाठकी विधि

ॐ अस्य श्रीरामचन्द्रस्तवराजस्तोत्रमंत्रस्य सनत्कुमार ऋषिः अनुष्टुप्छन्दः श्रीरामो देवता, सीता बीजम्, हनुमान् शक्तिः, श्रीरामप्रीत्यर्थे जपे (वा पाठे) विनियोगः ।।

सनत्कुमारऋषये नमः शिरसि । अनुष्टुप्छन्दसे नमः मुखे । ॐ श्रीरामदेवतायै नमो हृदि । ॐ सीताबीजाय नमः गुह्ये । ॐ हनुमच्छक्तये नमः पादयोः । ॐ स्तवराजकीलकाय नमः सर्वाङ्गे । इति ऋष्यादिन्यासः ।।

ॐ रामचन्द्राय अङ्गुष्ठाभ्यां नमः । ॐ सीतापतये तर्जनीभ्यां नमः । रघुनाथाय मध्यमाभ्यां नमः । ॐ भरताग्रजाय अनामिकाभ्यां नमः । ॐ दशरथात्मजाय कनिष्ठिकाभ्यां नमः । ॐ हनुमत्प्रभवे करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः । इति करन्यासः ।।

ॐ रामचन्द्राय हृदयाय नमः । ॐ श्रीसीतापतये शिरसे स्वाहा । ॐ रघुनाथाय शिखायै वषट् । ॐ भरताग्रजाय कवचाय हुम् । ॐ दशरथात्मजाय नेत्रत्रयाय वौषट् । ॐ हनुमत्प्रभवे अस्त्राय फट् । इति हृदयादिन्यासः ।।

सुमिरि गौरि गणपति गिरा, श्रीगुरुदेव मनाय ।
श्रीरामस्तवराजकी, भाषा लिखत बनाय ।।

इस श्रीरामचन्द्रस्तवराजस्तोत्ररूपी मंत्रके सनत्कुमारजी ऋषि– (प्रकाशक) हैं, अनुष्टुप्छन्द है, श्रीरामचन्द्रजी देवता हैं, सुन्दर वाणीस्वरूपिणी श्रीसीताजी बीज हैं, सबमें व्याप्त पवनपुत्र श्रीहनुमानजी शक्ति हैं, श्रीरामचन्द्रजीकी प्रीतिके निमित्त (प्रेमापरा भक्तिके प्राप्तिके निमित्त) जपमें वा पाठमें विनियोग होता है। (विधि—हाथमें जल लेकर मूलमें लिखे ॐ 'अस्य श्रीरामचन्द्रस्तवराजस्तोत्रस्य' से लेकर 'विनियोगः' तक पढकर छोड दे। फिर मूलमें लिखे हुए ऋष्यादिन्यास, करन्यास और हृदयादिन्यासको करैं)।

१–३२ अक्षरोंके श्लोकको अनुष्टुप् छन्द कहते हैं, सो रामस्तवराजमें थोडेसे दण्डकछंदके श्लोक रहने पर भी अधिकतर ३२ अक्षरवाले अनुष्टुप्छंदकेही श्लोक हैं इसीसे अनुष्टुप्छंद हुआ है।

अथ ध्यानम्

वाणीवेदविधायकं स्वजनहृद्ध्वान्तादिविध्वंसकं ।
वात्सल्यादिगुणार्णवं रघुवरं श्रीसीतया संयुतम् ।।
श्यामं सर्वगतं शिवादिप्रणतं सद्वैभवं सिद्धिदं ।
वन्दे चित्सुखविग्रहं भवहरं राजाधिराजं विभुम् ।।१।।

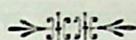
(फिर) हाथ जोडकर इस भांतिसे ध्यान करैं–

जो वाणी और वेदके विधायक, अपने भक्तोंके हृदयके अंधकारके नाशक, वात्सल्यादि गुणोंके सागर, श्यामशरीर, सबमें व्याप्त, शिव आदिकोंसे प्रणाम किये, सच्चे वैभववाले सिद्धिके देनेवाले, चिदानंदरूप शरीरवाले, संसारका भय मिटानेवाले, राजाओंके राजासर्वव्यापक श्रीजानकीजीसे संयुक्त हैं उन श्रीरामचन्द्रजीको मैं प्रणाम करता हूं ।।१।।

श्रीः

अथ रामस्तवराज

हिन्दीटीकासहित



श्रीसूत उवाच

सर्वशास्त्रार्थतत्त्वज्ञं व्यास सत्यवतीसुतम् ।

धर्मपुत्रः प्रहृष्टात्मा प्रत्युवाच मुनीश्वरम् ।।१।।

श्रीसूतजी बोले, (हे शौनकादि महर्षिगण !) समस्त शास्त्रोंके तत्त्वको जाननेवाले सत्यवतीके पुत्र, मुनियोंमें श्रेष्ठ श्रीव्यासजीसे धर्मपुत्र महाराज युधिष्ठिरजीने प्रसन्न होकर पूंछा ।।१।।

श्रीयुधिष्ठिर उवाच

भगवन् योगिनां श्रेष्ठ सर्वशास्त्रविशारद ।

किं तत्त्वं किं परं जाप्यं किं ध्यानं मुक्तिसाधनम् ।।

श्रोतुमिच्छामि तत्सर्वं ब्रूहि मे मुनिसत्तम ।।२।।

श्रीमहाराज युधिष्ठिरजी बोले–हे भगवन् ! योगियोंमें श्रेष्ठ ! हे समस्त शास्त्रोंके जाननेवाले ! हे मुनियोंमें प्रधान (ऐसा) कौनसा तत्त्व है, कौनसा जपनेयोग्य, परम मंत्र है और कौनसा ध्यान है जिसके साधनसे मुक्ति प्राप्त होती है, उसको सुननेकी मेरी ल ालसा है आप विस्तारपूर्वक कहिये ।।२।।

श्रीवेदव्यास उवाच

धर्मराज महाभाग शृणु वक्ष्यामि तत्त्वतः ।।३।।

श्रीवेदव्यासजी बोले–हे महाभाग्यशाली धर्मराज युधिठिर ! मैं (मुक्तिको देनेवाले) तत्त्वको कहता हूं तुम सुनो ।।३।।

यत्परं यद्गुणातीतं यज्ज्योतिरमलं शिवम् ।

तदेव परमं तत्त्वं कैवल्यपदकारणम् ।।४।।

(दूसरे श्लोकमें कौनसा तत्त्व है इस प्रश्नका उत्तर देते हैं जो मन और वाणीके परे है, जो [1]गुणोंसे अतीत जो स्वयं ज्योतिर्मय है, जो जन्म मरणके विकारसे रहित है, जो कल्याणकारक मङ्गलस्वरूप है, उसी परम तत्त्व (राम) को मुक्तिका देनेवाला जानो ।।४।।

श्रीरामेति परं जाप्य तारकं ब्रह्मसंज्ञकम् ।

ब्रह्महत्यादिपापघ्नमिति वेदविदो विदुः ।।५।।

---

१ सत्त्व रज और तम येही तीन गण हैं ।

(दूसरे श्लोकमें कौनसा जपने योग्य मंत्र इस प्रश्नका उत्तर देते हैं) वेदके जाननेवाले कहते है कि, श्रीराम यही साक्षात् ब्रह्मरूपी जपने योग्य परम मंत्र है, इसके जप करनेसे मनुष्य भवसागरसे पार हो जाता है, और ब्रह्महत्यादिक पापोंसे छूट जाता है ।।५।।

श्रीराम रामेति जना ये जपन्ति च सर्वदा ।
तेषां भुक्तिश्च मुक्तिश्च भविष्यति न संशयः ।।६।।

जो मनुष्य 'श्रीरामराम' इसको निरन्तर जपते हैं वह इस लोकमें अनेक प्रकारके भोगोंको भोगकर अंतमें निःसन्देह मुक्तिपदको प्राप्त करते हैं ।।६।।

स्तवराजं पुरा प्रोक्तं नारदेन च धीमता ।
तत्सर्वं संप्रवक्ष्यामि हरिध्यानपुरःसरम् ।।७।।

(दूसरे श्लोकमें कौनसा ध्यान है इस प्रश्नका उत्तर देते हैं) जो बुद्धिमान् श्रीनारदजीने स्तवराजके प्रारंभमें हरिका ध्यान कहा है उसको भलीभांतिसे मैं तुमसे कहूंगा ।।७।।

तापत्रयाग्निशमनं सर्वाघौघनिकृन्तनम् ।
दारिद्र्यदुःखशमनं सर्वसम्पत्करं शिवम् ।।८।।

वह स्तवराज तीनों [1]तापोंकी अग्निको शांत करनेवाला, समस्त पापोंको काटनेवाला, दरिद्ररूपी दुःखको दूर करनेवाला, सर्वसम्पत्तिको करनेवाला और कल्याण करनेवाला है ।।८।।

विज्ञानफलदं दिव्यं मोक्षैकफलसाधनम् ।
नमस्कृत्य प्रवक्ष्यामि रामं कृष्णं जगन्मयम् ।।९।।

विज्ञानरूपी फलको देनेवाले, मोक्षफलके साधन, दिव्य शरीरसे जगत्में व्याप्त, श्यामलशरीर श्रीरामचन्द्रजीको प्रणाम करके (उस स्तवराजको) कहता हूं ।।९।।

अयोध्यानगरे रम्ये रत्नमण्डपमध्यग ।
स्मरेत्कल्पतरोर्मूले रत्नसिंहासनं शुभम् ।।१०।।

अयोध्यानगरमें, रत्नमण्डपके बीचमे, कल्पवृक्षके नीचे सुंदर रत्नोंसे जडे हुए सिंहासनका स्मरण करे ।।१०।।

तन्मध्येऽष्टदलं पद्मं नानारत्नैश्च वेष्टितम् ।
स्मरेन्मध्ये दाशरथिं सहस्रादित्यतेजसम् ।।११।।

उस सिंहासनमें अनेक प्रकारके रत्नोंसे बने हुए अष्टदलवाले कमलपर विराजमान सहस्रों सूर्यके समान प्रतापशाली (महाराज) दशरथजीके पुत्र श्रीरामचन्द्रजीका स्मरण करै ।।११।।

[2]पितुरंकगतं राममिन्द्रनीलमणिप्रभम् ।
कोमलाङ्गं विशालाक्षं विद्युद्वर्णाम्बरावृतम् ।।१२।।

---

१ आधिदैवक, आधिभौतिक और आध्यात्मिक यही तीन ताप कहाते हैं। २ 'पितुरङ्कगतं रामं' यहांसे लेकर 'धनुर्बाणधरं हरिम्' यहां तक अर्थात् १२ वें श्लोकसे लेकर २१ वें श्लोक तक श्रीरामचन्द्रजीके विशेषण हैं। सो इन विशेषणोंसे युक्त भगवान्के स्वरूपका स्मरण करै।

कोमल शरीरवाले, विशाल नेत्रवाले, बिजलीकी समान छबिवाले पीताम्बरको धारण किये हुए अपने पिता महाराज दशरथजीकी गोदमें विराजमान भगवान् श्रीरामचन्द्रजी इन्द्रनील मणिकी समान शोभायमान हो रहे हैं ।।१२।।

भानुकोटिप्रतीकाशं किरीटेन विराजितम् ।
रत्नग्रैवेयकेयूरं रत्नकुण्डलमण्डितम् ।।१३।।

गलेमें रत्नोंके कण्ठे पहने, भुजाओंमें रत्नजडे बाजूबन्द पहने कानोंमें रत्नोंसे जडे कुण्डलोंको पहने, और मस्तकपर रत्नमय मुकुटको धारण किये करोडों सूर्योंके समान प्रकाशमान हो रहे हैं ।।१३।।

रत्नकंकणमञ्जीरकटिसूत्रैरलंकृतम् ।
श्रीवत्सकौतुभोरस्कं मुक्ताहारोपशोभितम् ।।१४।।

हाथोंमें रत्नजडित कंकण, चरणोंमें रत्नजडित आभूषण, कमरमें सुवर्णकी तगडी, वक्षस्थलमें दक्षिणावर्त्त पीत रोमावली चिह्न धारे, कौस्तुभमणि और मोतियोंके हारसे शोभायमान हो रहे हैं ।।१४।।

दिव्यरत्नसमायुक्तं मुद्रिकाभिरलंकृतम् ।
राघवं द्विभुजं बालं राममीषत्स्मिताननम् ।।१५।।

दिव्य रत्नोंसे युक्त अंगुठियोंको पहने, रघुवंशावतंस, दो भुजाओंवाले बालकरूपी श्रीरामचन्द्रजीका मुखमण्डल मन्द मुस्कानसे पूर्ण है ।।१५।।

तुलसीकुन्दमन्दारपुष्पमाल्यैरलंकृतम् ।
कर्पूरागुरुकस्तूरीदिव्यगंधानुलेपनम् ।।१६।।

कपूर अगर और कस्तूरी मिले दिव्य गंधवाले अंगरागको लगाये हुए तुलसी, कुन्द और मन्दारके फूलोंकी मालासे अलंकृत हो रहे हैं ।।१६।।

योगशास्त्रेष्वभिरतं योगीशं योगदायकम् ।
सदा भरतसौमित्रिशत्रुघ्नैरुपशोभितम् ।।१७।।

योगशास्त्रमें लीन, योगियोंके स्वामी और योगसिद्धिके देनेवाले, सदा भरत, लक्ष्मण और शत्रुघ्नरूपी भ्राताओंसे शोभित रहते हैं ।।१७।।

विद्याधरसुराधीशैः सिद्धगंधर्वकिन्नरैः ।
योगीन्द्रैर्नारदाद्यैश्च स्तूयमानमहर्निशम् ।।१८।।

विद्याधर, देवराज, सिद्ध, गन्धर्व, किन्नर और नारद आदि योगीन्द्रगण दिनरात जिनकी स्तुति करते हैं ।।१८।।

विश्वामित्रवसिष्ठादिमुनिभिः परिसंवितम् ।
सनकादिमुनिश्रेष्ठैर्योगिवृन्दैश्च सेवितम् ।।१९।।

विश्वामित्र, वसिष्ठ और सनकादि श्रेष्ठ मुनिगण एवं योगिगण जिनकी सेवा करते हैं ।।१९।।

राम रघुवरं वीरं धनुर्वेदविशारदम् ।
मङ्गलायतनं देवं रामं राजीवलोचनम् ।।२०।।

योगिगण जिनमें रमण करते हैं, ऐसे रामचन्द्र लालकमलके समान नेत्रवाले, परम कान्तियुक्त, मंगलके स्थान, रघुकुलमें श्रेष्ठ, विश्वविजयी और धनुर्वेदमें प्रवीण हैं ।।२०।।

सर्वशास्त्रार्थतत्त्वज्ञमानन्दकरसुन्दरम् ।
कौशल्यानन्दनं रामं धनुर्बाणधरं हरिम् ।।२१।।

सब शास्त्रोंके मर्मको जाननेवाले, आनंदकारक, सुंदर कौशल्याजीके पुत्र श्रीरामचंद्रजी धनुषबाणको धारण किये सबके दुःखोंको हरनेवाले हैं ।।२१।।

एवं संचिन्तयन्विष्णुं यज्ज्योतिरमलं विभुम् ।
प्रहृष्टमानसो भूत्वा मुनिवर्यः स नारदः ।।२२।।

इस प्रकारसे सर्वव्यापी, जन्ममरणसे रहित, स्वयं प्रकाशमान विष्णुभगवान्‌का चिन्तवन करके प्रसन्नमन हो मुनियोंमें श्रेष्ठ नारदजी ।।२२।।

सर्वलोकहितार्थाय तुष्टाव रघुनन्दनम् ।
कृताञ्जलिपुटो भूत्वा चिन्तयन्नद्भुतं हरिम् ।।२३।।

सबके हितके लिये और श्रीरामचन्द्रजीकी प्रसन्नताके लिये हाथ जोड अञ्जली बांधकर उन्हीं अद्‌भुत हरिका चिन्तवन करने लगे ।।२३।।

यदेकं यत्परं नित्यं यदनन्तं चिदात्मकम् ।
यदेकं व्यापकं लोके तद्रूपं चिन्तयाम्यहम् ।।२४।।

जो एक है, जो सबसे परे है, जो अविनाशी है, जो अनंत है, जो चिदात्मक है और जो एक होकरही सब लोकोंमें व्यापक है उसी रूप (परब्रह्म) का मैं चिंतवन करता हूं ।।२४।।

विज्ञानहेतुं विमलायताक्ष प्रज्ञानरूपं स्वसुखैकहेतुम् ।।
श्रीरामचन्द्रं हरिमादिदेवं परात्परं राममहं भजामि ।।२५।।

विज्ञानके हेतु निर्मल और विशाल नेत्रवाले, अखण्ड ज्ञानके स्वरूप, निज सुखके एक मात्र कारण, तीनों तापोंके नाशक जन्ममरणके दुःखको दूर करनेवाले । आदि देव परात्पर (परेसे परे) श्रीरामचंद्रजीका मैं भजन करता हूं ।।२५।।

कविं पुराणं पुरुषं पुरस्तात्सनातनं योगिनमीशितारम् ।।
अणोरणीयांसमनन्तवीर्यं प्राणेश्वरं राममसौ ददर्श ।।२६।।

सर्वज्ञ, आदि, सर्वव्यापी, सनातन, योगी जगत्‌के स्वामी, अणुसे भी अणुके बीचमें स्थित, परमात्मा, अतुल पराक्रमी, प्राणेश्वर, श्रीरामचंद्रजीका नारदजी अपने सन्मुख दशर्न करते भये ।।२६।।

श्रीनारद उवाच

नारायणं जगन्नाथमभिराम जगत्पतिम् ।
कविं पुराणं वागीशं रामं दशरथात्मजम् ।।२७।।

नारदजी बोले–नारायण, जगन्नाथ, परम सुंदर, जगत्पति, कवि. अनादि, वाणीके स्वामी, श्रीदशरथजीके कुमार, रघुकुलके मुकुटमणि श्रीरामचंद्रजीको मनसे और शिरसे मैं नित्य प्रणाम करता हूं ।।२७।।

राजराजं रघुवरं कौशल्यानन्दवर्द्धनम् ।
भर्गं वरेण्य विश्वेशं रघुनाथं जगद्गुरुम् ।।२८।।

राजराजेश्वर, रघुराज, कौशल्याजीके आनंदको बढानेवाले, तेजोमय वरने योग्य, विश्वके स्वामी, जगत्के गुरु रघुकुलके मुकुटमणि, श्रीरामचंद्रजीको मनसे और शिरसे मैं नित्य प्रणाम करता हूं ।।२८।।

सत्य सत्यप्रियं श्रेष्ठं जानकीवल्लभं विभुम् ।
सौमित्रिपूर्वजं शांतं कामदं कमलेक्षणम् ।।२९।।

सत्यरूपी, सत्यप्रिय (सत्यही है प्यारा जिनको), श्रेष्ठ, जानकीवल्लभ, सर्वव्यापी; श्रीलक्ष्मणजीके बडे भ्राता, शांत, भक्तोंके मनोरथोंको पूर्ण करनेवाले, कमलनयन, रघुकुलके मुकुटमणि श्रीरामचंद्रजीको मनसे और शिरसे मैं नित्य प्रणाम करता हूं ।।२९।।

आदित्यं रविमीशानं घृणिं सूर्यमनामयम् ।।
आनन्दरूपिणं सौम्यं राघवं करुणामयम् ।।३०।।

आदित्य, रवि, ईशान, घृणि, सूर्य, अनामय, आनंदरूपी सौम्यमूर्त्ति, करुणानिधान, रघुकुलके मुकुटमणि श्रीरामचंद्रजीको मनसे और शिरसे मैं नित्य प्रणाम करता हूं ।।३०।।

जामदग्न्य तपोमूर्तिं रामं परशुधारिणम् ।।३१।।

जमदग्निमुनिके पुत्र तपोमूर्ति, फरसाधारी, परशुरामरूपी रघुकुलके मुकुटमणि श्रीरामचंद्रजीको मनसे और शिरसे मैं नित्य प्रणाम करता हूं ।।३१।।

वाक्पतिं वरदं वाच्य श्रीपतिं पक्षिवाहनम् ।
श्रीशार्ङ्गधारिणं रामं चिन्मयानन्दविग्रहम् ।।३२।।

वाणीके स्वामी, वर देनेवाले वन्दनीय, गरुडपर चढनेवाले, सुंदर शार्ङ्गनामक धनुषको धारण करनेवाले, चैतन्य और आनंदरूपी रघुकुलके मुकुटमणि श्रीरामचंद्रजीको मनसे और शिरसे मैं नित्य प्रणाम करता हूं ।।३२।।

१–४९ श्लोकमें 'मनसा शिरसा नित्यं' 'प्रणमामि रघूत्तमम् ।' यह अन्वय रहनेसे प्रणमामि क्रियापदका प्रत्येक विशेषणोंसे सम्बन्ध हो जानेके कारण प्रत्येक श्लोकमें कहना चाहिये ।

हलधृ[1]ग्विष्णुमीशानं बलरामं कृपानिधिम् ।।३३।।

हलको धारण करनेवाले, सर्वव्यापी, ईशान, कृपानिधान, बलरामरूपी रघुकुलके मुकुटमणि श्रीरामचंद्रजीको मनसे और शिरसे मैं नित्य प्रणाम करता हूं ।।३३।।

श्रीवल्लभकृपानाथं जगन्मोहनमच्युतम् ।
मत्स्यकूर्मवराहादिरूपधारिणमव्ययम् ।।३४।।

लक्ष्मीके प्यारे, कृपाके स्वामी, जगत्को मोहनेवाले, अविनाशी, मत्स्य, कूर्म और वाराह आदि अवतारको धारण करनेवाले, सनातन रघुकुलके मुकुटमणि श्रीरामचन्द्रजीको मनसे और शिरसे मैं नित्य प्रणाम करता हूं ।।३४।।

वासुदेवं जगद्योनिमनादिनिधनं हरिम् ।
गोविन्दं गोपतिं विष्णुं गोपीजनमनोहरम् ।।३५।।

वासुदेव, जगत्के उत्पन्न करनेवाले, आदि अन्तसे रहित, सांसारिक दु:खोंके नाश करनेवाले, गोविन्द, इन्द्रियोंके वा गउओंके स्वामी सर्वव्यापी) गोपियोंके मनको हरनेवाले श्रीकृष्णरूपी रघुकुलके मुकुटमणि श्रीरामचंद्रजीको मनसे और शिरसे मैं नित्य प्रणाम करता हूं ।।३५।।

गोपालं गोपरीवारं गोपकन्यासमावृतम् ।
विद्युत्पुञ्जप्रतीकाशं रामं कृष्णं जगन्मयम् ।।३६।।

गउओंके पालनेवाले, गउओंके परिवारवाले, गोपोंकी कन्याओंसे घिरे हुए, बिजलीके ढेरकी समान प्रकाशमान, अन्तर्यामी, देवके रूपसे सबमें रमनेवाले, श्यामसुंदर, जगत्में व्याप्त, रघुकुलके मुकुटमणि, श्रीरामचंद्रजीको मनसे और शिरसे मैं नित्य प्रणाम करता हूं ।।३६।।

गोगोपिकासमाकीर्णं वेणुवादनतत्परम् ।
कामरूपं कलावन्तं कामिनीकामदं विभुम् ।।३७।।

गउओंसे और गोपियोंसे घिरे हुए बंशीके बजानेमें लीन कामदेवके समान रूपवाले, (चौंसठ) कलाओंसे युक्त, स्त्रियोंकी कामना एवं कामके उपभोगको देनेवाले, सर्वव्यापी, रघुकुलके मुकुटमणि श्रीरामचंद्रजीको मनसे और शिरसे मैं नित्य प्रणाम करता हूं ।।३७।।

मन्मथं मथुरानाथं माधवं मकरध्वजम् ।
श्रीधरं श्रीकरं श्रीशं श्रीनिवासं परात्परम् ।।३८।।

मनको मथनेवाले, मथुराके स्वामी, माधव, कामदेवके समान सुंदर लक्ष्मीको वाम भागमें विराजमान रखनेवाले, लक्ष्मी (संपत्ति) को बढानेवाले, लक्ष्मीके स्वामी, लक्ष्मीमें निवास करनेवाले, परेसे भी परे, रघुकुलके मुकुटमणि श्रीरामचंद्रजीको मनसे और शिरसे मैं नित्य प्रणाम करता हूं ।।३८।।

---

१ पूर्वापरकी रीतिसे यहां भी 'हलधारिणम्' होना चाहिये था लेकिन् 'हलधारिण' के होनेसे श्लोकका छंदोभंग होता जान श्लोकपूर्त्तिके लिये "हलधृग्" ही पाठ हुआ है।

भूतेशं भूपतिं भद्रं विभूतिं भूतिभूषणम् ।
सर्वदुःखहरं वीरं दुष्टदानववैरिणम् ।।३९।।

'[1]पञ्चभूत–महत्तत्त्व एवं समस्त प्राणिमात्रके स्वामी, पृथिवीके स्वामी मंगलस्वरूप, महत् ऐश्वर्यवाले ऐश्वर्यरूपी आभूषणको धारण करनेवाले, सबके दुःखोंको हरनेवाले, वीर दुष्ट दानवोंके नाश करनेवाले रघुकुलके मुकुटमणि श्रीरामचंद्रजीको मनसे और शिरसे मैं नित्य प्रणाम करता हूं ।।३९।।

श्रीनृसिंहं महाबाहुं महान्तं दीप्ततेजसम् ।
चिदानन्दमयं नित्यं प्रणवं ज्योतिरूपिणम् ।।४०।।

श्रीनृसिंहस्वरूपी, महाभुजावाले, बडेसे भी बडे, (बडे) प्रकाशित तेजवाले, चैतन्यमय, आनंदस्वरूपी, सनातनसे विराजमान, ओंकाररूपी और ज्योतिःस्वरूपी रघुकुलके मुकुटमणि श्रीरामचंद्रजीको मनसे और शिरसे मैं नित्य प्रणाम करता हूं ।।४०।।

आदित्यमण्डलगतं निश्चितार्थस्वरूपिणम् ।
भक्तप्रियं पद्मनेत्रं भक्तानामीप्सितप्रदम् ।।४१।।

आदित्यमण्डलमें विराजमान, निश्चित अर्थके स्वरूप भक्तोंके प्यारे वा भक्तोंको प्यार करनेवाले, कमलनेत्र, भक्तोंके मनोरथोंको पूर्ण करनेवाले, रघुकुलके, मुकुटमणि श्रीरामचंद्रजीको मनसे और शिरसे मैं नित्य प्रणाम करता हूं ।।४१।।

कौशलेयं कलामूर्तिं काकुस्थं कमलाप्रियम् ।।
सिंहासने समासीनं नित्यव्रतमकल्मषम् ।।४२।।

अयोध्याके राजा, अपनी कलाओंसे मूर्ति धारण करनेवाले, इन्द्ररूपी वृषभ के कंधेपर विराजनेवाले, महाराजाके वंशमें उत्पन्न लक्ष्मीजीके प्यारे वा लक्ष्मीजीको प्यार करनेवाले, सिंहासनपर भलीभाँतिसे विराजमान, सत्यव्रतधारी, पापोंसे रहित रघुकुलके मुकुटमणि श्रीरामचंद्रजीको मनसे और शिरसे मैं नित्य प्रणाम करता हूं ।।४२।।

विश्वामित्रप्रियं दान्तं स्वदारनियतव्रतम् ।
यज्ञेशं यज्ञपुरुषं यज्ञपालनतत्परम् ।।४३।।

विश्वामित्रके प्यारे वा विश्वामित्र पर प्यार करनेवाले, मनके साथ समस्त इन्द्रियोंको जीतनेवाले, अपनीही स्त्रीमें नियमसे प्रीतिका व्रत करनेवाले, यज्ञके स्वामी, यज्ञपुरुष, यज्ञके पालन करनेमें लीन, रघुकुलके मुकुटमणि श्रीरामचंद्रजी को मनसे और शिरसे मैं नित्य प्रणाम करता हूं ।।४३।।

सत्यसंधं जितक्रोधं शरणागतवत्सलम् ।
सर्वक्लेशापहरणं विभीषणवरप्रदम् ।।४४।।

---

१ पृथिवी, जल, अग्नि, वायु और आकाश इनको पंचतत्त्व कहते हैं ।

सत्यप्रतिज्ञावाले, क्रोधको जीतनेवाले, शरण आये हुए को पुत्रके समान रखनवाले, सब प्रकारके क्लेशोंको हरनेवाले, विभीषणको वर देनेवाले रघुकुलके मुकुटमणि श्रीराम-चंद्रजीको मनसे और शिरसे मैं नित्य प्रणाम करता हूं ।।४४।।

दशग्रीवहरं रुद्रं केशवं केशिमर्दनम् ।
वालिप्रमथनं वीरं सुग्रीवेप्सितराज्यदम् ।।४५।।

रावणको मारनेवाले, रुद्रस्वरूपी, केशव (क) ब्रह्मा (ईश) शिवको उत्पन्न कर रक्षा करनेवाले, केशी नामक दैत्यको मारनेवाले, बालीको मारनेवाले, वीर, सुग्रीवकी इच्छानुसार (किष्किन्धाका) राज्य देनेवाले, रघुकुलके मुकुटमणि श्रीरामचन्द्रजीको मनसे और शिरसे मैं नित्य प्रणाम करता हूं ।।४५।।

नरवानरदेवैश्च सेवितं हनुमत्प्रियम् ।
शुद्धसूक्ष्मं परं शांतं तारकं ब्रह्मरूपिणम् ।।४६।।

मनुष्य, वानर और देवताओंसे सेवित, हनुमान्‌जीके प्यारे वा हनुमान्‌जीपर प्यार करनेवाले, मायासे रहित, कठिनतासे ध्यान में आनेवाले, (भवसागरसे) तारनेवाले, ब्रह्मके स्वरूप, रघुकुलने मुकुटमणि श्रीरामचंद्रजीको मनसे और शिरसे मैं नित्य प्रणाम करता हूं ।। ४६ ।।

सर्वभूतात्मभूतस्थं सर्वाधारं सन तनम् ।।
सर्वकारणकर्त्तारं निदानं प्रकृतेः परम् ।।४७।।

समस्त प्राणियोंमें आत्मरूपसे विराजमान, समस्त जगत्‌के आधार, सनातन, सब कारणोंके कर्त्ता, सबके आदि, मायासे परे, रघुकुलके मुकुटमणि श्रीरामचंद्रजीको मनसे और शिरसे मैं नित्य प्रणाम करता हूं ।।४७।।

निरामयं निराभासं निरवद्यं निरञ्जनम् ।
नित्यानन्दं निराकारमद्वैतं तमसः परम् ।।४८।।

रोगोंसे रहित, आभाससे रहित, दूषणोंसे रहित, मायाके मलिनतासे रहित सदा आनंदमय, निराकार, अद्वैत (केवल एक) अज्ञानरूपी अंधकारसे परे, रंघुकुलके मुकुटमणि, श्रीरामचंद्रजीको मनसे और शिरसे मैं नित्य प्रणाम करता हूं ।।४८।।

परात्परतरं तत्त्वं सत्यानन्दं चिदात्मकम् ।
मनसाशिरसा नित्यं प्रणमामि रघूत्तमम् ।।४९।।

परब्रह्म, सत् चित आनंदस्वरूप, रघुकुलके मुकुटमणि श्रीरामचंद्रजीको मनसे और शिरसे मैं नित्य प्रणाम करता हूं ।।४९।।

सूर्यमण्डलमध्यस्थं रामं सीतासमन्वितम्
नमामि पुण्डरीकाक्षममेयं गुरुतत्परम् ।।५०।।

श्रीजानकीजीके साथ सूर्यमण्डलमें विराजमान, कमलके समान नेत्रवाले, गुरुकी सेवा करनेवाले, अतुल प्रतापी श्रीरामचंद्रजीको मैं नमस्कार करता हूं ।।५०।।

नमोस्तु वासुदेवाय ज्योतिषां पतये नमः।
नमोस्तु रामदेवाय जगदानन्दरूपिणे ।।५१।।

वासुदेवके लिये नमस्कार है, प्रकाशमानोंके स्वामीके लिये नमस्कार है; जगत्के आनंदरूपी श्रीरामचंद्रजीके लिये नमस्कार है।।५१।।

नमो वेदान्तनिष्ठाय योगिने ब्रह्मवादिने।
मायामयनिरस्ताय प्रपन्नजनसेविने ।।५२।।

वेदान्तमें निष्ठा रखनेवाले, ब्रह्मवादी, योगी, मायामय (संसार) से निस्तार करनेवाले, शरणमें आनेवालोंकी रक्षा करनेवाले श्रीरामचंद्रजीको नमस्कार है ।।५२।।

वन्दामहे महेशा[१]नं चण्डकोदण्डखण्डनम्।
जानकीहृदयानन्दचन्दनं रघुनन्दनम् ।।५३।।

महत् ऐश्वर्यवाले, शिवजीके धनुषको तोडनेवाले, जानकीजीके हृदयको आनंद देनेवाले, चंदनके समान शीतल स्वभाववाले श्रीरघुनंदनजीको प्रणाम करते हैं।।५३।।

उत्फुल्लामलकोमलोत्पलदलश्यामाय रामाय नः
कामाय प्रमदामनोहरगुणग्रामाय रामात्मने ।।
योगारूढमुनींद्रमानससरोहंसाय संसारविध्वंसाय
स्फुरदोजसे रघुकुलोत्तंसाय पुंसे नमः ।।५४।।

पूर्ण खिले निर्मल कमलके दलके समान श्यामशरीरवाले के लिये अपने रूपमें सबको रमानेवाले रामके लिये, अपनी सबको प्रीति उत्पन्न करनेवाले कामके लिये, अपने गुणोंसे युवती स्त्रियोंके मनको हरनेवालेके लिये, रमणीय क्रीडाकारी स्वभाववालेके लिये, योगके सिंहासनपर विराजमान मुनिराजोंके मनरूपी मानससरोवर में हंसके समान विहार करनेवालेके लिये, जन्ममरणरूपी संसारके दुःखको नाश करनेवालेके लिये, परम प्रतापी बलवान्के लिये, श्रीरघुकुलके मुकुटमणिके लिये, और परम पुरुषके लिये हमारा नमस्कार है।।५४।।

भवोद्भवं वेदविदां वरिष्ठमादित्यचन्द्रानलसुप्रभावम् ।।
सर्वात्मकं सर्वगतस्वरूपं नमामि रामं तमसः परस्तात् ।।५५।।

जिनसे जगत् उत्पन्न हुआ है, जो वेदके जाननेवालोंमें प्रधान हैं, जो सूर्य चंद्र और अग्निके समान सुंदर प्रभावशाली हैं, जो समस्त जगत्में व्याप्त हैं, जो सकल चराचर जीवमात्रके स्वरूपमें प्रगट हैं, जो अज्ञानसे परे हैं उन्हीं श्रीरामचंद्रजीको मैं प्रणाम करता हूं ।।५५।।

निरञ्जनं निष्प्रतिमं निरीहं निराश्रयं निष्कलमप्रपञ्चम्।
नित्यं ध्रुवं निर्विषयस्वरूपं निरन्तरं राममहं भजामि ।।५६।।

---

१ 'महेशानचण्डकोदंड' यह पाठ भी अन्य पुस्तकों में पाया जाता है।

जो अविद्याकी मलिनतासे रहित, उपमासे रहित, समस्तइच्छाओंसे रहित आश्रयरहित, कलाओंकी न्यूनाधिकतासे रहित, जगत्के प्रपंचोंसे रहित, उत्पत्ति, स्थिति और प्रलयकालमें नाशरहित (सदाविराजमान रहनेवाले) है उन सत्य स्वरूपी समस्त इंद्रियोंके विषयोंसे रहित स्वरूपवाले श्रीरामचंद्रजी को मैं निरंतर भजता हूं ।।५६।।

भवाब्धिपोतं भरताग्रजं तं भक्तिप्रियं भानुकुलप्रदीपम् ।
भूतत्रिनाथं भुवनाधिपत्यं भजामि रामं भवरोगवैद्यम् ।।५७।।

संसाररूपी सागरसे पार जानेकी नौका स्वरूप, भरतजीके बडे भाई, भक्ति को प्रिय माननेवाले, सूर्यके कुलको प्रकाश करनेवाले, सृष्टि, स्थिति और प्रलय कालमें सब प्राणियोंके स्वामी, समस्त भुवनोंके स्वामी, संसार में आवागमनरूपी रोगके वैद्य, अर्थात् ज्ञान, वैराग्य और भक्तिरूपी औषधिको सेवन कराकर मुक्ति देनेवाले श्रीरामचंद्रजीको मैं भजता हूं ।।५७।।

सर्वाधिपत्यं समर[1]ङ्गधीरं सत्यं चिदानंदमयस्वरूपम् ।
सत्यं शिवं शांतिमयं शरण्यं सनातनं राममहं भजामि ।।५८।।

सबके स्वामी, सबमें समान प्रेम रखनेवाले बुद्धिमान्, सत्य, चैतन्य आनंदमयस्वरूपी, सत्यप्रतिज्ञावाले, मङ्गलमय, शांतिमय, शरणमें आनेवालोंकी रक्षा करनेवाले, आदि, मध्य और अंतसे रहित श्रीरामचंद्रजीको मैं भजता हूं ।।५८।।

कार्यक्रियाकारणमप्रमेयंकविं पुराणं कमलायताक्षम् ।
कुमारवेद्यं करुणामयं तं कल्पद्रुमं राममहं भजामि ।५९।।

कार्य और क्रिया कारण, असीम, सर्वज्ञ, आदिपुरुष, कमलके समान नेत्रवाले, कुमार (सनक, सनन्दन, सनातन और सनत्कुमार के जाननेवाले, करुणानिधान, सबकी कामना पूर्ण करनेमें कल्पवृक्षस्वरूपी श्रीरामचंद्रजी को मैं भजता हूं ।।५९।।

त्रैलोक्य[2]नाथं सरसीरुहाक्षं दयानिधिं द्वंन्द्वविनाशहेतुम् ।
महाबलं वेदनिधिं सुरेशं सनातनं राममहं भजामि ।।६०।।

तीनों लोकोंके स्वामी, कमलके समान नेत्रवाले, दयाके समुद्र सुख दुःख, पाप पुण्य आदि द्वंद्वोंके नाशक, महाबली, वेदोंके निधि स्वरूप, देवताओंके स्वामी, आदि, मध्य और अंतसे रहित श्रीरामचंद्रजीको मैं भजता हूं ।।६०।।

वेदान्तवेद्यं कविमीशितारमनादिमध्यान्तमचिन्त्यमाद्यम् ।
अगोचरं निर्मलमेकरूपं नमामि रामं तमसः परस्तात् ।।६१।।

वेदान्तके जाननेवाले, सर्वज्ञ, सर्वेश्वर, आदि मध्य और अंतसे रहित, चितवनमें न आनेयोग्य सबसे आदिपुरुष, साधारण नेत्रोंसे न दीखनेवाले, निर्मल, अद्वितीय, अज्ञानसे परे श्रीरामचंद्रजीको मैं नमस्कार करता हूं ।।६१।।

---

१ "समर गभीरं" इति वा पाठः नूतनपुस्तके द्रष्टव्यः ।
२ स्वर्ग, मृत्यु और पातालको तीनों लोक कहते हैं ।

अशेषवेदात्मकमादिसंज्ञमजं हरिं विष्णुमनन्तमाद्यम् ।
अपारसंवित्सुखमेकरूपं परात्परं राममहं भजामि ।।६२।।

समस्त वेदस्वरूपी, समस्त संज्ञाके आदि, जन्मरहित, सांसारिक दुःखोंके नाशक, सर्वव्यापी, अनंत, सबके आदि अपार ज्ञान और सुखसंपन्न एकरूप, परेसे परे श्रीरामचंद्रजीको मैं भजता हूं ।।६२।।

तत्त्वस्वरूपं पुरुषं पुराणं स्वतेजसा पूरितविश्वमेकम् ।
राजाधिराजं रविमण्डलस्थं विश्वेश्वरं राममहं भजामि ।।६३।।

परब्रह्मस्वरूप, परमपुरुष, सबके आदिभूत, अपने तेजसे विश्वको पूर्ण करनेवाल, अद्वितीय, राजाधिराज, सूर्यमण्डलमें विराजमान, विश्वके स्वामी श्रीरामचंद्रजीको मैं भजता हूं ।।६३।।

लोकाभिरामं रघुवंशनाथं हरिं चिदानन्दमयं मुकुन्दम् ।
अशेषविद्याधिपतिं कवीन्द्रं नमामि रामं तमसः परस्तात् ।।६४।।

समस्त लोकवासियोंको अपने रूप और गुणोंमें रमानेवाले, रघकुलके स्वामी, सबके मन हरनेवाले, चैतन्य स्वरूप आनंदमय मुकुन्द, संपूर्ण विद्याओंके स्वामी, कवीश्वर, अज्ञानसे परे श्रीरामचंद्रजीको मैं नमस्कार करता हूं ।।६४।।

योगीन्द्रसंघै शतसेव्यमानं नारायणं निर्मलमादिदेवम् ।
नतोस्मि नित्यं जगदेकनाथमादित्यवर्णं तमसः परस्तात् ।।६५।।

योगिराजोंद्वारा सैकडों प्रकारसे सेवित, नारायण, निर्मल, आदिदेव, अविनाशी, जगत्‌के एकमात्र स्वामी, आदित्यके समान वर्णवाले, अज्ञानसे परे श्रीरामचंद्रजीको नमस्कार करता हूं ।।६५।।

विभूतिदं विश्वसृजं विराजं राजेन्द्रमीशं रघुवंशनाथम् ।
अचिन्त्यमव्यक्तमनन्तमूर्तिं ज्योतिर्मयं राममहं भजामि ।।६६।।

ऐश्वर्यको देनेवाले, सृष्टिको रचनेवाले, विराट्‌रूपको धारण करनेवाले, राजाओंमें महाराज कहानेवाले, ईश्वर, रघुकुलके स्वामी, चिंतवनमें न आनेवाले, मन वाणी और नेत्रोंसे प्रकट न दीखनेवाले, अनंत मूर्तियोंको धारण, करनेवाले, ज्योतिर्मय श्रीरामचंद्रजीको मैं भजता हूं ।।६६।।

अशेषसंसारविकारहीनमादिस्तु[1] संपूर्णसुखाभिरामम् ।
समस्तसा[2]क्षी तमसः परस्तान्नारायणं विष्णुमहं भजामि ।।६७।।

---

१ 'आदिः' के स्थानमें 'आदि' होना था, परंतु आर्ष वचन निर्दोष है ।

२ 'साक्षी' के स्थानमें "साक्षिणं" होना था परंतु आर्ष वचन निर्दोष है। किन्ही २ आधुनिक पुस्तकों में "आदित्यगं साक्षि" ऐसा पाठ भी, मिलता है परंतु प्राचीन पुस्तकोंमें यह नहीं रहनेसे प्रामाणिक नहीं कहा जा सकता है। "आदिसुसम्पूर्णसुखाभिरामम्" यह पाठभी विचारने योग्य है।

समस्त सांसारिक विकारोंसे रहित, सबके आदि, संपूर्ण सुखोंके अभिराम, सबके साक्षी, अज्ञानसे परे नारायण, सर्वव्यापी श्रीरामचंद्रजीको मैं भजता हूं ।।६७।।

मुनीन्द्रगुह्यं परिपूर्णमेकं कलांनिधिं कल्मषनाशहेतुम् ।
परात्परं यत्परमं पवित्रं नमामि रामं महतो महान्तम् ।।६८।।

मुनीन्द्रों को भी दुर्बोध, अखण्ड, अद्वितीय, कलानिधि, पापोंके नाशक, परेसे परे, परम पवित्र, महत्से भी महत् श्रीरामचंद्रजी को मैं नमस्कार करता हूं ।।६८।।

ब्रह्मा विष्णुश्च रुद्रश्च देवेन्द्रो देवतास्तथा ।
आदित्यादिग्रहाश्चैव त्वमेव रघुनन्दन ।।६९।।

हे श्रीरघुनन्दन ! ब्रह्मा, विष्णु, रुद्र, इन्द्र, देवता और सूर्यादि नवग्रह आपहीके रूप हैं ।।६९।।

तापसा ऋषयः सिद्धाः साध्याश्च मरुतस्तथा ।
विप्रा वेदास्तथा यज्ञाः पुराणं धर्मसंहिता ।।७०।।

हे रामचंद्रजी ! तपस्विगण, ऋषिगण, सिद्धगण, साध्यगण, मरुद्गण वेदपाठी और यज्ञ करानेवाले ब्राह्मण समस्त पुराण और संपूर्ण धर्मकी संहिता आपहीके रूप हैं ।।७०।।

वर्णाश्रमास्तथा धर्मा वर्णधर्मास्तथैवच ।
यक्षराक्षसगन्धर्वा दिक्पाला दिग्गजादिभिः ।।७१।।

हे सीतापते ! ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र इन चारों वर्णोंके ब्रह्मचर्य, गार्हस्थ्य वानप्रस्थ और संन्यास यह चारों आश्रम । सत्य, तप, दया और दान इन चारों चरण-वाले धर्म, उपरोक्त चारों वर्ण और चारों आश्रमोंके धर्म, यक्ष, राक्षस, गंधर्व, दिक्पाल, दिशाओंके गज आदि आपहीके रूप हैं । कारण आपकीही सत्तासे सब विद्यमान हैं ।।७१।।

सनकादिमुनिश्रेष्ठास्त्वमेव रघुपुङ्गव ।
वसवोष्टौ त्रयः काला रुद्रा एकादश स्मृताः ।।७२।।

हे रघुनाथजी ! स[1]नकादिक श्रेष्ठ मुनि, आठों वसु[2], तीनों[3] काल और एकादश[4] रुद्र आपहीके रूप हैं ।।७२।।

१–सनक, १, सनन्दन २, सनातन ३ और सनत्कुमार ४ येही सनकादि श्रेष्ठ मुनि कहाते हैं । २–ध्रुव १, अध्वर २, सोम ३, आप ४, वायु ५, अग्नि ६, प्रत्यूष ७, प्रभास ये ही ८ आठों वसु हैं । ३–भूत १, भविष्यत् २ और बर्त्तमानको ३ तीनों काल कहते हैं । ४–वीरभद्र १, शंभु २, गिरीश ३, अजैकपात् ४, अहिर्बुध्न्य ५, पिनाकी ६, भुवनाधीश ७, कपाली, ८, स्थाणु ९, भव १०, रुद्र ११, येही एकादश रुद्र हैं ।

तारका दशदिक् चैव त्वमेव रघुनन्दन ।
सप्त द्वीपाः समुद्राश्च नगा नद्यस्तथा द्रुमाः ॥७३॥

हे रघुनंदनजी ! तारागण, दशों दिशा[1], सातों द्वीप[2] सातों समुद्र[3], सातों पर्वत[4], सातों नदियें[5] और सातों वृक्ष[6] आपहीके रूप हैं ॥७३॥

स्थावरा जङ्गमाश्चैव त्वमेव रघुनायक ।
देवतिर्यङ्मनुष्याणां दानवानां तथैव च ॥७४॥

हे रघुनायकजी ! स्थावर और जंगम आपहीके रूप हैं, एवं देवता, तिर्यक् (पशु पक्षी कीट पतंगादि) मनुष्य और दानव आपहीके रूप हैं ॥७४॥

माता पिता तथा भ्राता त्वमेव रघुवल्लभ ।
सर्वेषां त्वं परं ब्रह्म त्वन्मयं सर्वमेव हि ॥७५॥

हे रघुवल्लभ ! समस्त प्राणियोंके माता, पिता और भाई आपहीके रूप हैं। सबके बीचमे आपका रूप है। आप परब्रह्म हो और आपके बीचमें सबके रूप हैं। ॥७५॥

त्वमक्षरं परं ज्योतिस्त्वमेव पुरुषोत्तमः ।
त्वमेव तारकं ब्रह्म त्वत्तोऽन्यन्नैव किञ्चन ॥७६॥

हे रामचंद्रजी ! आपही अविनाशी और परम प्रकाशमान हैं, आपही पुरुषोत्तम हैं आपही संसारसागरसे तारनेवाले, ब्रह्मरूपी नौकास्वरूप हैं, आपके सिवाय और कुछ नहीं ॥७६॥

१–पूर्व १, आग्नेय २, दक्षिण ३, नैर्ऋत्य ४, पश्चिम ५, वायव्य ६, उत्तर ७, ईशान ८, ऊर्ध्व ९ और अधोदिशाको १० दश दिशा कहते हैं।

२–जम्बूद्वीप १, प्लक्षद्वीप २, शाल्मलीद्वीप ३, कुशद्वीप ४, क्रौंचद्वीप, ५, शाकद्वीप ६, और पुष्करद्वीपको ७ सप्तद्वीप कहते हैं।

३–क्षारसागर १, इक्षुरससागर २, सुरासागर ३, घृतसागर ४, क्षीरसागर ५, दधिसागर ६ और शुद्धोदकसागर ७ येही सात समुद्र हैं।

४–महेंद्रपर्वत १, मलयपर्वत २, सह्यपर्वत ३, शुक्तिमान्पर्वत, ४, ऋक्षपर्वत ५; विन्ध्याचल ६, और पारियात्र ७ ये सात पर्वतके नामसे प्रसिद्ध हैं।

५–गंगा १, यमुना २, गोदावरी ३, सरस्वती ४, नर्मदा ५, सिंधु ६, और कावेरी ७, येही सात नदियोंके नाम प्रसिद्ध हैं।

६–पीपल१, बेल २, वट ३, धात्री (आमलेका वृक्ष) ४, अशोक ५, आम ६, और गूलर ७ ये सात वृक्ष हैं।

शान्तं सर्वगतं सूक्ष्मं परं ब्रह्म सनातनम्
राजीवलोचनं रामं प्रणमामि जगत्पतिम् ।।७७।।

निर्मल आनंदस्वरूप, सर्वव्यापी, सूक्ष्म, वेद और जीवात्मासे परे ब्रह्म, आदि मध्य और अंतसे रहित, कमलके समान नेत्रवाले जगत्के स्वामी श्रीरामचंद्रजीको मैं प्रणाम करता हूं ।।७७।।

श्रीवेदव्यास उवाच

ततः प्रसन्नः श्रीरामः प्रोवाच मुनिपुंगवम् ।
तुष्टोस्मि मुनिशार्दूल वृणीष्व वरमुत्तमम् ।।७८।।

व्यासजी बोले—इस भांतिसे श्रीनारदजीने जब स्तुति की तब प्रसन्न होकर श्रीरामचंद्रजी नारदजीसे बोले कि, हे मुनिश्रेष्ठ नारदजी! मैं तुमसे प्रसन्न हुआ हूं अब तुम उत्तम वर मांगो ।।७८।।

श्रीनारद उवाच

यदि तुष्टोऽसि सर्वज्ञ श्रीराम करुणानिधे ।
त्वन्मूर्तिदर्शनेनैव कृतार्थोऽहं ममेप्सितम् ।।७९।।

नारदजीने कहा—हे सर्वज्ञ! हे श्रीराम! हे करुणानिधान! जो आप प्रसन्न हुए हैं, तो मैं आपकी प्रसन्न मूर्तिका दर्शन करके कृतार्थ हुआ और मेरा मनोरथ पूर्ण हो गया ।।७९।।

धन्योऽहं कृतकृत्योऽहं पुण्योऽहं पुरुषोत्तम ।
अद्य मे सफलं जन्म जीवितं सफलं च मे ।।८०।।

हे पुरुषोत्तम श्रीरामचंद्रजी! मैं धन्य हूं, मैंने समस्त शुभ कर्म कर लिये, मै पुण्यरूपी हो गया, आज मेरा जन्म और जीवन सफल हुआ ।।८०।।

अद्य मे सफलं ज्ञानमद्य मे सफलं तपः ।
अद्य मे सफलो यज्ञस्त्वत्पदाम्भोजदर्शनात् ।।८१।।

हे श्रीराम! आपके चरणकमलोंका दर्शन करनेसे आज मेरा ज्ञान सफल हुआ, आज मेरा तप सफल हुआ और आज मेरा यज्ञ सफल हुआ ।।८१।।

अद्य मे सफलं सर्वं त्वन्नामस्मरणं तथा ।
त्वत्पादाम्भोरुहद्वन्द्वे सद्भक्तिं देहि राघव ।।८२।।

हे राघव! आज मेरे सभी कार्य सफल हुए और आपके नामका स्मरण भी सफल हुआ अब आप अपने चरणकमलोंसे सद्भक्ति (अचल भक्ति) दीजिये ।।८२।।

ततः परमसंप्रीतो रामः प्राह स नारदम्[१] ।।८३।।

तब परम प्रसन्न होकर श्रीरामचंद्रजी नारदजीसे बोले ।।८३।।

---

१ 'मेघगंभीरया वाचा धन्वी विजितमन्मथः' किसी २ पुस्तकमें यह आधा श्लोक क्षेपकरूपसे आ जाता है।

श्रीराम उवाच

मुनिवर्य महाभाग मुने त्विष्टं ददामिते ।
यत्त्वया चेप्सितं सर्व मनसा तद्भविष्यति ।।८४।।

हे मुनियोंमें श्रेष्ठ महाभाग्यवान् नारदजी ! मैं तुम्हारे इष्टको देता हूं जो तुम्हारा मनोरथ है, वह पूर्ण होगा ।।८४।।

नारद उवाच

वरं न याचे रघुनाथ युष्मत्पदाब्जभक्तिः सततं ममास्तु ।
इदं प्रियं नाथ वरं प्रयच्छ पुनः पुनस्त्वामिदमेव याचे ।।८५।।

नारदजी बोले—हे रघुनाथजी ! मैं धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष इन चारों पदार्थोंका वर नहीं मांगता हूं, हे नाथ ! मैं आपसे बारंबार यही याचना करता हूं कि, आपके दोनों चरणकमलोंमें मेरी भक्ति बनी रहे यही आप मुझे वर दीजिये ।।८५।।

श्रीवेदव्यास उवाच

इत्येवमीडितो रामः प्रादात्तस्मै वरान्तरम् ।
विरराम महातेजाः सच्चिदानन्दविग्रहः। ।।८६।।

श्रीव्यासजीने कहा—(हे धर्मराज युधिष्ठिरजी) इस स्वतवराजसे प्रसन्न हो नारदजीको अपने चरणोंकी सद्भक्तिका वर देकर सच्चिदानन्दस्वरूपी महातेजस्वी श्रीरामचंद्रजीने 'वरांतर' दे शांतभावको धारण किया ।।८६।।

अद्वैतममलं ज्ञानं तन्नामस्मरणं तथा ।
अन्तर्धानं जगामाथ पुरतस्तस्य राघवः ।।८७।।

वरांतरको कहते हैं—अद्वैत निर्मल ज्ञान (केवल रामही परब्रह्म हैं) और श्रीराम-नामका स्मरण (श्रीरामनामका स्मरणही मुख्य है) यह दोनों वर देकर नारदजीके सन्मुखसे श्रीरामचंद्रजी अंतर्द्धान होगये ।।८७।।

इति श्रीरघुनाथस्य स्तवराजमनुत्तमम् ।
सर्वसौभाग्यसंपत्तिदायकं मुक्तिदं शुभम् ।।८८।।

इतिके होनेसे यहां स्तवराजकी पूर्ति जानी जाती है । यह परमोत्तम श्रीरामचंद्रजीका स्तवराज सर्व सौभाग्यका देनेवाला, धनको देनेवाला और मुक्तिको देनेवाला मंगलमय है ।।८८।।

कथितं ब्रह्मपुत्रेण वेदानां सारमुत्तमम् ।
गुह्याद्गुह्यतरं दिव्यं तव स्नेहात्प्रकीर्तितम् ।।८९।।

(व्यासजी कहते हैं हे युधिष्ठिर !) श्री ब्रह्माजीके पुत्र श्रीनारदजीका कहा वेदोंका सार उपनिषदोंसे भी उत्तम और गुप्तसे भी गुप्त दिव्य स्वतवराजको मैंने तुम्हारे स्नेहसे वर्णन किया है ।।८९।।

यः पठेच्छृणुयाद्वापि त्रिसन्ध्यं श्रद्धयान्वितः ।
ब्रह्महत्यादिपापानि तत्समानि बहूनि च ॥९०॥

जो मनुष्य प्रातःकाल, मध्याह्न समय और सायंकालमें श्रद्धाके साथ इस स्तवराजका पाठ करता वा श्रवण करता है उसके ब्रह्महत्यादिक पाप और ब्रह्महत्याके समान अनेक उग्रपाप ॥९०॥

स्वर्णस्तेयसुरापानगुरुतल्पायुतानि च ।
गोवधाद्युपपापानि ह्यनृतात्सम्भवानि च ॥
सर्वैः प्रमुच्यते पापैः कल्पायुतशतोद्भवैः ॥९१॥

एवं सुवर्ण चुरानेसे, मदिरा पीनेसे, दशहजार वार गुरुदेवकी पत्नीके साथ एक शय्यापर शयन करनेसे उत्पन्न हुए पाप, गोवध आदि उपपाप, मिथ्या भाषणसे उत्पन्न हुए पाप और दश कल्पोंके उत्पन्न हुए समस्त प्रकारके पाप नष्ट हो जाते हैं ॥९१॥

मानसं वाचिकं पापं कर्मणा समुपार्जितम् ।
श्रीरामस्मरणेनैव तत्क्षणान्नश्यति ध्रुवम् ॥९२॥

मन, वचन और कर्मसे उत्पन्न हुए पाप श्रीरामनामके स्मरण करतेही निश्चय नष्ट हो जाते हैं ॥९२॥

इदं सत्यमिदं सत्यं सत्यमेतदिहोच्यते ॥९३॥

यह (फल) सत्य है, सत्य है, सत्यही कहा[1] है ॥९३॥

रामः सत्यं परं ब्रह्म रामात्किंचिन्न विद्यते ।
[2]तस्माद्रामस्य [3]रूपोऽयं सत्यं सत्यमिदं जगत् ॥९४॥

श्रीराम सत्य हैं (अविनाशी हैं) परब्रह्म हैं श्रीरामसे भिन्न कुछ नहीं है (सबमें श्रीरामकी सत्ता विद्यमान है) अतएव यह जगत सत्य २ ही श्रीरामका ही रूप है ॥९४॥

सूत उवाच

श्रीरामचन्द्र रघुपुंगव राजवर्य राजेंद्र राम रघुनायक राघवेश ।
राजाधिराज रघुनन्दन रामभद्र दासोऽहमद्य भवतः शरणागतोऽस्मि ॥९५॥

---

१ निश्चयात्मक अटल बात तीन बारही कही जाती है ।

२ 'तस्माद्रामस्य रूपत्वम्' यह पाठ भी आधुनिक पुस्तकोंमें पाया जाता है, प्राचीन लिखित पुस्तकोंमें न होनेसे नूतन जान पडता है ।

३ 'रूपोऽयं' के स्थानमें 'रूपं हि' होना चाहिये था परंतु आर्ष वचन 'रूपोऽयं' ही है ।

व्यासजीके इतना कहनेपर सूतजी बोले—हे श्रीरामचंद्र ! हे रघुकुलभूषण ! हे राजाओंके मुकुटमणि ! हे राजेन्द्र ! हे राम ! हे रघुनायक ! हे राघवेश ! हे राजाधिराज ! हे रघुनंदन ! हे रामभद्र ! मैं दासभावसे आज आपकी शरण होता हूं ।।९५।।

वैदेहीसहितं सुरद्रुमतले हैमे महामण्डपे मध्येपुष्पकमासने मणिमये [1]वीरासने संस्थितम् । अग्रे वाचयति प्रभञ्जनसुते तत्त्वं मुनीन्द्रैःपरं व्याख्यातं भरतादिभिः परिवृतंरामं भजे श्यामलम् ।।९६।।

श्रीरामचंद्रजी जानकीजीके साथ, कल्पवृक्षके नीचे सुवर्णके महामण्डपके बीचमें, मणियोंसे जडे पुष्पकविमानमें वीरासनसे विराजमान हैं उनके दहिनी ओर भरतजी और बाईं ओर शत्रुघ्नजी खडे चँवर डुला रहे हैं एवं लक्ष्मणजी छत्र धारण किये खडे हैं, और सामने हनुमान्जी मुनिराजोंकी वर्णित रामयश प्रकाशिनी स्तुति गाय २ कर सबको सुना रहे हैं, इस प्रकारसे श्मामल शरीर श्रीरामचंद्रजीका मैं भजन करता हूं ।।९६।।

रामं रत्नकिरीटकुण्डलयुतं केयूरहारान्वितं सीतालंकृतवामभागममलं सिंहासनस्थं विभुम् । सुग्रीवादिहरीश्वरैः सुरगणैः संसेव्यमानं सदा विश्वामित्रपराशरादिमुनिभिः संस्तूयमानंप्रभुम् ।।९७।।

रत्नोंसे जडे हुए, किरीट, कुण्डल, बाजूबंद और हार पहने, निर्मल सिंहासनपर विराजमान, वामभागमें श्रीजानकीजीसे शोभित, विश्वमें व्याप्त, सुग्रीवादि वानरोंके स्वामी और देवताओंसे निरन्तर सेवित, विश्वामित्र, पराशर आदि मुनियोंने जिनकी स्तुति की है उन श्रीरामचंद्रजीका मैं भजन करता हूं ।।९७।।

सकलगुणनिधानं योगिभिस्तूयमानं [2]भुजविजितविमानं राक्षसेन्द्रादिमानम् । महित[3]वृषभयानं सीतया शोभमानं स्मृतहृदयविमानं ब्रह्म रामाभिधानम् ।।९८।।

सकलगुणोंके विधान (खान), योगिराजोंसे स्तुतिको प्राप्त, भुजबलसे पुष्पक विमानको जीतनेवाले, रावण आदिके मारनेवाले, शिवजीसे पूजित. श्रीजानकीसे शोभित, मानरहित पुरुषोंके हृदयमें स्मृतिको प्राप्त होनेवाले, ब्रह्मरूपी श्रीरामचंद्रजीका मैं भजन करता हूं ।।९८।।

---

१ एकं पादं तथैकस्मिन्विन्यस्योरौ तु संस्थितम् ।
इतरस्मिंस्तथा चान्यं वीरासनमितीरितम् ।।१।।

दक्षिण चरण वाम ऊरुके ऊपर और वाम चरण दक्षिण ऊरुके नीचे रखकर उठनेका नाम वीरासन है ।।१।।

२ 'भुजविजितसमानं' यह नवीन पाठ भी आधुनिक पुस्तकोंमें मिलता है ।

३ 'अहित पभायनं यह' नवीन पाठ भी आधुनिक पुस्तकोंमें मिलता है ।

रघुवर तव मूर्तिर्मामके मानसाब्जे नरकगतिहरंते नामधेयं मुखे मे । अनिशमतुलभक्त्या मस्तके त्वत्पदाब्जे भवजलनिधिमग्नं रक्ष मामार्त्त-बन्धो ।।९९।।

हे श्रीरघुवर ! आपकी श्यामसुंदर मूर्ति मेरी मनरूपी कमल में फुरती है, नरकरूप दुर्गतिको नाश करनेवाला आपका नाम मेरे मुख में फुरता है, निरंतर अतुल भक्तिके साथ मेरा मस्तक आपके चरणकमलोंमें नवता है, उसपर आपके चरणकमल विराजमान हो। हे आर्त्तजनबंधों ! भवसागरमें डूबते हुए मेरी आप रक्षा कीजिये ।।९९।।

रामरत्नमहं वन्दे चित्रकूटपतिं हरिम् ।
कौशल्याशुक्तिसम्भूतं जानकीकण्ठभूषणम् ।।१००।।

इति श्रीसनत्कुमारसंहितायां नारदोक्तः
श्रीरामस्तवराजः सम्पूर्णः ।

तीनों तापोंके नाशक, चित्रकूटके स्वामी, कौशल्यारूपी सीपीसे उत्पन्न, श्रीजानकीजी के कंठके आभूषण, रत्नरूपी श्रीरामचंद्रजीको मैं नमस्कार करता हूं ।।१००।।

इति श्रीसनत्कुमारसंहिताके अंतर्गत श्रीनारदजीकथित
श्रीरामचंद्रजीका स्तवराज समाप्त हुआ।

केनापि भक्तेनोक्तःश्लोकोऽयम्—विमलकमलनेत्रं विस्फुरन्नीलगात्रं तपनकुलपवित्रं दानवध्वान्तमित्रम् । भुवनकुलचरित्रं भूमिपुत्रीकलत्रममितगुणसमुद्रं रामचंद्रं नमामि ।।१।।

किसी भक्तका कहा हुआ श्लोक। निर्मल कमलके समान नेत्रवाले, स्फुरायमान नीले शरीरवाले, सूर्यवंशको पवित्र करनेवाले, दानवरूपी अंधकारके नाश करनेवाले सूर्य, समस्त भुवनोंमें व्याप्त चरित्रवाले, जानकीजीके पति, असीम गुणोंके सागर श्रीरामचंद्रजीको मैं नमस्कार करता हूं ।।१।।

पण्डित—श्यामसुंदरलाल त्रिपाठीकृत 'श्रीरामस्तवराज' की हिन्दीटीका समाप्त।

'उन्निससौ सरसठ सुभग, सम्वत श्रावणमास।
शुक्ल पक्ष तिथि पूर्णिमा, तिलक पूर्ण मुखरास ।।'

हमारे प्रकाशनों की अधिक जानकारी व खरीद के लिये हमारे निजी स्थान :

खेमराज श्रीकृष्णदास
अध्यक्ष : श्रीवेंकटेश्वर प्रेस,
९१/१०९, खेमराज श्रीकृष्णदास मार्ग,
७ वी खेतवाडी बॅक रोड कार्नर,
मुंबई - ४०० ००४.
दूरभाष/फैक्स-०२२-२३८५७४५६.

खेमराज श्रीकृष्णदास
६६, हडपसर इण्डस्ट्रियल इस्टेट,
पुणे - ४११ ०१३.

गंगाविष्णु श्रीकृष्णदास,
लक्ष्मी वेंकटेश्वर प्रेस व बुक डिपो
श्रीलक्ष्मीवेंकटेश्वर प्रेस बिल्डींग,
जूना छापाखाना गली, अहिल्याबाई चौक,
कल्याण, जि. ठाणे, महाराष्ट्र - ४२१ ३०१
दूरभाष - ०२५१-२२०९०६१.

खेमराज श्रीकृष्णदास
चौक, वाराणसी (उ.प्र.) २२१ ००१.
दूरभाष - ०५४२-२४२००७८

KHEMRAJ SHRIKRISHNADASS

